## भारतीय नारी : गौरव, गरिमा और महिमा

*प्रो. रुबी ज़ुत्शी*

समाज की वास्तविक स्थिति का अनुमान उस समाज में विद्यमान स्त्रियों की दशा को देखकर लगाया जा सकता है। परिवर्तित होते समय के साथ नारी की स्थिति में भी परिवर्तन आया है। जहाँ प्राचीन काल की नारी लक्ष्मी स्वरूपा, देवी मानी जाती थी, वह स्वतंत्र थी, अपनी इच्छा से वर का चुनाव कर विवाह कर सकती थी, एक योद्धा की भाँति युद्धभूमि में अपना कौशल सिद्ध कर सकती थी या यूँ कहें कि समाज में पुरुषों के साथ सम्मान और गरिमा से कंधे से कंधा मिलाकर चलती थी वहीं परिवर्तित होते समय ने उसके स्वतंत्र अस्तित्व को सामाजिक बंधनों और अवरोधों में जकड़कर उसे घर की चार दीवारी में कैद कर दिया। पुरुष प्रधान समाज में मानो नारी मात्र एक वस्तु व भोग्या बनकर रह गई, जिसकी अपनी कोई पहचान और गरिमा ही नहीं थी। वह हर प्रकार से चाहे आर्थिक, सामाजिक यहाँ तक कि मानसिक रूप से भी पुरुषों पर निर्भर थी। नैतिकता के नाम पर कई बेड़ियों में बंधती चली गई नारी बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, सती-प्रथा, अनमेल विवाह जैसे कई कुप्रथाओं और शोषण का शिकार होती चली गई। इतना ही नहीं सामाजिक व्यवस्था के चलते पुत्र तथा पुत्री के मध्य किए जाने वाले अंतर के कारण नारी जटिल जीवन स्थितियों का शिकार हो घुटन, शोषण, अकेलेपन, संत्रास भरा जीवन यापन करने के लिए विवश हुई। सिमोन द बोउआर के कथनानुसार "स्त्री की स्तिथि अधीनता की है। स्त्री सदियों से ठगी गई है और उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरुष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही। यह त्रासदी उस आधे भाग की है, जिसे आधी आबादी कहा जाता है।"[1] इन बेड़ियों से मुक्ति पाने के लिए नारी को वैचारिक युद्ध लड़ना है, इस सब में कैद स्त्री तभी मुक्ति पा सकती है जब दोनों ही स्तरों (व्याहवारिक और अकादमिक) पर कार्य किए जाएं। स्त्री को कैद से मुक्ति दिलाने के लिए केवल सहानुभूति से काम नहीं चलने वाला है। जगदीश चतुर्वेदी के अनुसार "स्त्री को कैद से मुक्ति दिलाने के लिए व्यावहारिक एवं अकादमिक दोनों ही स्तरों पर जंग लड़ी जानी चाहिए। जो लोग सोचते हैं कि सिर्फ आंदोलन करके जंग जीती जा सकती है, वे गलत सोचते हैं। स्त्री की मुक्ति के लिए पढ़ाई और लड़ाई का एक साथ चलना बेहद ज़रूरी है। स्त्री की जंग जब तक वैचारिक स्तर पर नहीं जीती जाती तब तक स्त्री मुक्ति का सपना साकार नहीं होगा।"[2]

वर्तमान समय में महिलाएं अपनी स्थिति के प्रति चेतन, जागरुक हैं। वह आर्थिक रूप से स्वावलंबित, आत्मनिर्भर, सामाजिक बेड़ियों से मुक्त, आत्मविश्वास और दृढ़ हैं तो इसके पीछे कई समाज सुधारकों और आंदोलनकारियों का अनथक संघर्ष और प्रयास है। अपनी शक्ति और अधिकारों के प्रति जागृत व सक्रिय हो चुकी नारी सशक्त हो समाज, परिवार और देश की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। नारी के अविस्मरणीय योगदान ने ही सदा उसे उत्कृष्ट स्थान प्रदान किया है। नारी के संघर्ष, समर्पण, कर्तव्य और सेवा भाव ही उसे गौरवमय बना, उसकी गरिमा और महिमा का बखान करते हैं। महिला कथा-लेखिकाओं ने अपने लेखन द्वारा स्त्री विषयक चिंतन को बखूबी उभारा है। इन लेखिकाओं ने नारी जीवन की विषमताओं,

विडंबनाओं, आशा-निराशा, जीवन की कटुता आदि का यथार्थ चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। शिक्षित व कामकाजी होते हुए भी पुरुष वर्ग उन्हें पूर्ण रूप से समान अधिकार देने में असमर्थ है, इस प्रकार की वास्तविकता का उल्लेख करते हुए महिला कथाकारों ने नारी के अधिकार अस्तित्व की पहचान की माँग की है। महिला लेखन की कमान संभालने वाली लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा, अलका सरावगी, कुसुम अंसल, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्ण सोबती, मन्नू भण्डारी आदि जैसी प्रबुद्ध लेखिकाएं सम्मिलित हैं। महिला रचनाकारों के संदर्भ में डॉ. शोभा वेरेकर लिखती हैं "महिला लेखन में विलक्षण पठनीयता, विश्वसनीयता, जिजीविषा और मार्मिकता के कारण ही इसे विशाल पाठक वर्ग मिला है। आत्म अभिव्यक्ति की आकांक्षा के साथ-साथ आत्म सजगता और परिवेश चेतना महिला कहानीकार के रचनात्मक सरोकार का केन्द्रीय बिन्दु रहा है।"[3]

लेखिका **उषा प्रियंवदा** की अधिकांश रचनाएं नारी प्रधान हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी जीवन के विविध पक्षों को बड़ी कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। अपने प्रथम उपन्यास 'पचपन खंभे लाल दिवारे' के माध्यम से लेखिका ने एक ऐसी स्त्री का वर्णन किया है जो अपने परिवार को आर्थिक संकट से उभारने, परिवार के दायित्व के लिए अपने प्रेम व इच्छाओं का त्याग करती है। वह अपने चारों ओर पारिवारिक प्रतिबद्धता, सामाजिक दायित्व, पद तथा गरिमा की दीवारें बना लेती है। रुकोगी नहीं राधिका, शेषयात्रा, अंतरवंशी जैसे उपन्यासों में लेखिका ने दो संस्कृतियों के संघर्ष में पिसकर अकेलेपन से जूझती, विदेशी परिस्थितियों के मध्य स्वयं को संतुलित कर पाने के द्वंद्व में जीवन यापन करने वाली महिलाओं का चित्रण किया है।

लेखिका **कुसुम अंसल** द्वारा रचित उपन्यासों को नारी जीवन का जीवंत दस्तावेज़ कहा जा सकता है। उनके उदास आँखें, नीव का पत्थर, उस तक, एक और पंचवटी जैसे उपन्यास जहाँ एक ओर नारी जीवन की समस्याओं, उतार-चढ़ाव, मुक्ति, अस्तित्व की तलाश व उसकी संभावनाओं के प्रयास को उभारते हैं तो वहीं दूसरी ओर इसी अस्मिता की तलाश की राह में भटकाव को भी चित्रित करते हैं। इनकी रचनाओं में चित्रित नारी पात्र को पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के चलते संबंध विच्छेद से उत्पन्न तनाव के कारण अपनी गरिमा और 'स्व' को खोजते दिखाया है। अपने 'स्व' को पाने के लिए वे मानवीय भावनाओं के अंतर्मन तक पहुँचती हैं। हिन्दी साहित्य की लोकप्रिय लेखिकाओं में से एक **मृदुला गर्ग** ने आत्म निर्भर नारी का उल्लेख अपने उपन्यासों और कहानियों में किया है। अपनी जीवंतता के कारण ये नारी पात्र कठिनाइयों का सामना करते हुए स्वयं अपना मार्ग बनाते हैं। आपने नारी सशक्तिकरण, नारी जागरण, नारी मुक्ति आंदोलन को प्रमुख रूप से उजागर किया है। नारी जीवन के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक रूप को बड़ी निडरता के साथ प्रस्तुत किया है। अपनी रचनाओं के माध्यम से मृदुला गर्ग ने इस तथ्य को उभारने का प्रयास किया है कि समय के साथ मूल्यों, परंपराओं में भी परिवर्तन आना आवश्यक है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति किसी भी संबंध को केवल तब तक ही

निभा सकने में समर्थ है जब तक उससे उसके व्यक्तित्व-निर्माण में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो या उसकी गरिमा आहत न हो।

लेखिका **मैत्रेयी पुष्पा** का मानना है कि समाज में पुरुषों के समक्ष स्त्रियों को प्राप्त अधिकारों का सही उपयोग ही वास्तव में स्त्री मुक्ति है। नारी में जागृत हुई 'स्व' की भावना के चलते वह अपनी गरिमा और अस्तित्व को पहचानने लगी। उनकी रचनाओं में ऐसी महिलाओं का चित्रण मिलता है जो संघर्षरत हैं, अपनी लड़ाई स्वयं लड़ते हुए अपने अधिकारों को प्राप्त करती हैं। उन्होंने अधिकांश रचनाओं में ऐसे नारी पात्रों का चित्र उकेरा है जो स्त्री की चिर-बंदिनी मूक छवि को तोड़कर विद्रोह को दर्शाती हैं। मैत्रेयी पुष्पा की रचनाएं अन्य रचनाकारों से इस अर्थ में भी भिन्न हैं कि वे स्त्री-सशक्तिकरण की अवधारणा को घर-परिवार की सीमाओं से बाहर निकालकर सामाजिक, राजनैतिक सरगर्मियों के बीचों-बीच ले आती हैं। आपने भोगे गए सत्य, स्त्री पीड़ा, संघर्ष, स्त्रियों की समस्याओं तथा जीवन संघर्ष को बड़ी संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, भ्रूण हत्या, बाँझपन, वेश्यावृति, विधवा नारी, देह-विक्रय, बलात्कार जैसी समस्याओं का उल्लेख करते हुए, इनका प्रतिकार करती नारी की शक्ति तथा विवेक से भी अवगत कराया है। लेखिका ने बखूबी इस यथार्थ की ओर ध्यान आकर्षित किया है कि जब तक कामकाजी महिलाएं अपना सारा वेतन अपने परिवारवालों के हाथों में सौंपती हैं तब तक उन्हें शाबाशी, तारीफ़ें, घर की लक्ष्मी, सीता-सावित्री जैसे संबोधन दिए जाते हैं किन्तु अपनी यही आय उन्हें देने से इनकार करने पर वह चरित्रहीन बन जाती हैं। उपन्यास 'गुनाह-बेगुनाह' इसका सशक्त उदाहरण है जिसमें समीना तथा लक्ष्मी मैडम का अपने ससुरलवालों को अपनी आय उन्हें न देने पर वे उनकी दृष्टि में चरित्रहीन नारी बन चुकी थीं जो केवल गुलछर्रे उड़ाती थीं यथा "खत्म हो गई सीता और सावित्री। अब उनकी निगाह में मैं एक नाजायज़ औरत थी जो तनख्वाह मिलते ही यारों के साथ गुलछर्रे उड़ाने निकल जाती थी।"[4] इस संदर्भ में डॉ. ज्योति किरण का यह कथन "इस समाज में जब स्त्रियाँ अपनी समझ और काबलियत जाहिर करती हैं तब वह कुलचछनी मानी जाती हैं, जब वह खुद विवेक से काम करती हैं तब मर्यादाहीन समझी जाती हैं। अपनी इच्छाओं, अरमानों के लिए जब वह आत्मविश्वास के साथ लड़ती हैं और गैर समझौता वादी बन जाती हैं, तब परिवार और समाज के लिए वह चुनौती बन जाती है।"[5] इस सत्य को उभारता है कि नारी की गरिमा पर समाज जब चाहे उँगली उठा सकता है।

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध लेखिका **कृष्णा सोबती** पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के लिए एक अलग जगह स्थापित करते हुए एक विद्रोही के रूप में उभरी, जिन्होंने अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाई। साहित्य के क्षेत्र में आप बेबाक, यथार्थ लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं, क्योंकि आपने नारी अस्मिता पर प्रमुखता से प्रश्न उठाए। इनकी रचनाओं में वर्णित नारी पात्र वर्तमान समाज के लिए प्रेरणा स्त्रोत हैं। इनके द्वारा रचित पात्र यदि एक ओर सम्मानता के लिए छटपटाते हैं तो वहीं दूसरी ओर उससे जूझते हुए भीतर से ही राह भी ढूँढ लेते हैं। उन्होंने स्त्री को किसी वैचारिक ढाँचे के दायरे में बँधकर अवतरित होते नहीं दिखाया बल्कि

आत्मविश्वास से पूर्ण, दृढ़, जीवट और संघर्षशील दिखाया है। ये महिलाएं स्वाभिमानी हैं जो स्त्री-जीवन को एक नया विस्तार प्रदान करती हैं। अपने 'स्व' की स्थापना करना तथा अपने पैरों पर खड़े होकर जीवन की राह चुनते हुए अपने अस्तित्व का निर्माण करते नारी पात्रों का चित्रण करती हैं लेखिका **प्रभा खेतान**। प्रभा खेतान की रचनाओं की कई महिलाएं आर्थिक मूल्यों में परिवर्तन चाहती हैं। इसी अर्थ को अपने जीवन का केंद्र बिन्दु बना वे स्वयं अर्थोपार्जन कर पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलती हैं। लेखिका ने चित्रित नारी पात्रों के माध्यम से नारी के लिए एक खुले, स्वतंत्र संसार की स्थापना करने का प्रयास किया है।

पुरुष वर्चस्ववादी समाज में पुरुषों के संग हर क्षेत्र में खड़े होकर महिलाओं के लिए अपने अस्तित्व को स्थापित करने व आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देने वाली **मृणाल पाण्डे** ने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी की स्थिति में आए परिवर्तन तथा मनोवैज्ञानिक सोच को उजागर किया है। वे मनुवादी धारणा का खण्डन कर आडंबर, अंधविश्वास, पाखंड को रेखांकित करते हुए स्त्री अस्मिता तथा अस्तित्व की वकालत करती हैं। नारी के बदलते रूप, उसके आत्मविश्वास तथा विद्रोह, अपनी गरिमा और अस्मिता की पहचान करती नारी के कई नए रूपों को उनके साहित्य में देखा जा सकता है। नारी स्वतंत्रता को लेकर लेखिका **नासिरा शर्मा** लिखती हैं "वे आधुनिकता के नाम पर स्त्री स्वच्छंदता की पक्षधर नहीं है। वे हर हाल में विवाह, परिवार को बनाए रखने में विश्वास रखती है, अगर एक बार ये आधार खंडित हो गए तो नई पीढ़ी फैशन के नाम पर अनेक विकृतियां और असाध्य रोगों की शिकार हो जाएंगी जिसका प्रभाव समाज पर दूरगामी रूप में स्वस्थ नहीं होगा।"[6] आपके नारी पात्र अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हैं और उन्हें पाने के लिए प्रयत्नशील भी।

हिन्दी साहित्य को अपनी लेखनी द्वारा अप्रतिम योगदान देने वाली लेखिका **मन्नू भण्डारी** ने नारी जीवन का सशक्त और यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुरुष वर्चस्ववादी समाज में नारी मुक्ति तथा उसकी गरिमा व महिमा के संदर्भ में कई प्रश्न उठाए। उन्होंने नारी-जीवन के यथार्थ को बड़ी सहजता, आत्मीयता और बारीकी के साथ उकेरते हुए प्रस्तुत किया है। स्त्री मन से जुड़ी अनुभूतियों का चित्रण, तथा भारतीय नारी के जीवन और उसकी विशेषताओं का प्रभावशाली वर्णन आपकी रचनाओं की विशेषता है।

नारी की गरिमा के प्रति जहाँ महिला साहित्यकारों ने लेखनी चलाई, वहीं पुरुष साहित्यकार भी इस संदर्भ में पीछे नहीं रहे। पुरुष प्रधान समाज में विकृत मानसिकता पर चोट करने वालों में लेखक भगवानदास मोरवाल भी आते हैं। आपने स्त्री को साहस प्रदान कर, उन्हें सक्षम बनाया है ताकि वह स्वयं हित के लिए आगे आए तथा अपने अस्तित्व को गौरवपूर्ण मंच प्रदान करे। लड़कियों के महत्व को उजागर करते हुए वह शकुंतला नामक उपन्यास के माध्यम से कहते हैं कि लड़कियां सेतु का काम करती हैं। वह दो व्यक्तियों को नहीं अपितु दो परिवारों को जोड़ती हैं। अतः कहा जा सकता है कि यदि स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के बराबर समझें जाएं तो स्त्री परपीड़न तथा आत्मपीड़न से मुक्त हो सम्मान और गरिमा पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकती है।

**संदर्भ:**


१. लाल जीवन, हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श. *International Journal of Advances in Social Sciences,* vol. 2, year 2014

२. चतुर्वेदी जगदीश, स्त्री अस्मिता: साहित्य और विचारधारा, भूमिका से

३. निर्मला ,साहित्य में नारी चेतना मैत्रेयी पुष्पा के ,*International Journal of Applied Research* 2017

४. पुष्पा मैत्रेयी, गुनाह-बेगुनाह, पृ. 78

५. निर्मला ,मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में नारी चेतना ,*International Journal of Applied Research* 2017

६. मलागी. रश्मि के, समकालीन हिंदी उपन्यासों में नारी से जुड़ा युगबोध, वितस्ता सं. 2021



*प्रो. रुबी जुत्शी*

*हिन्दी-विभाग*

*कश्मीर विश्वविद्यालय,श्रीनगर कश्मीर*